

## 8. Right - Meaning and different theories

आधिकार - अर्थ और विभिन्न सिद्धांत

अर्थ :- आधिकार सामाजिक जीवन के वे आवश्यक दशाएँ हैं जिन्हें बिना न तो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और न ही वह समाज के लिए कोई उपयोगी कार्य कर सकता है। ये आवश्यक दशाएँ राज्य के द्वारा निर्मित की जाती हैं। व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास एवं आर्थिक संभव से अधिक अधिकार मानवीय जीवन की आवश्यक दशाएँ हैं इस लिए वर्तमान समय में प्रत्येक राज्य के द्वारा अधिकारिक अधिकार नगरिकों को प्रदान किये जाते हैं।

आधिकारों के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के द्वारा भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ प्रदान की गई हैं। लॉकी के अनुसार - "आधिकार सामाजिक जीवन से वे परिस्थितियाँ हैं जिन्हें अभाव में सामान्यतः कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकता" (Rights are those conditions of social life without which no man can seek in general to be happy at his best). वाइल्ड के अनुसार - "कुछ विशेष कार्यों को करने की स्वाधीनता की अधिक भाग है। (A right is a reasonable claim of freedom to the exercise of certain activities.) राजनीति शास्त्र के विभिन्न विद्वानों द्वारा दो गम्भीर आधिकार सम्बन्धी परिभाषाओं के विश्लेषण से यही बात निकलती है कि मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए अधिकार आवश्यक हैं और समाज और राज्य उन्हें उसी कारण स्वीकार करते हैं एवं संरक्षण प्रदान करते हैं कि उनके बिना बढ़ता सामाजिक जीवन संभव नहीं है।

आधिकार सम्बन्धी विभिन्न सिद्धांत :-

व्यक्ति के अधिकारों से व्यक्तित्व में भाग्य और अछा स्वरूप क्या है इस सम्बन्ध में राजनीति शास्त्र के विचारकों एवं विद्वानों के द्वारा समय-समय पर अनेक प्रकार के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है। ऐसे सिद्धांतों में निम्न प्रमुख हैं। -

### 1. प्राकृतिक अधिकारों का सिद्धांत (Natural theory of Right) :-

यूनीस यह एक प्राचीन सिद्धांत है पल्लु यह 18वीं तथा 19वीं सदी के राजनीतिक चिन्तन में बहुत अधिक लोकप्रिय था इस सिद्धांत के अनुसार



मनुष्य के अधिकार स्वयं सिद्ध हैं। निरपेक्ष हैं और जन्मजात हैं। इस सिद्धांत के प्रतिपादक यह मत व्यक्त करते हैं कि अधिकार राज्य द्वारा व्यक्ति को प्रदान नहीं किये जाते बल्कि व्यक्ति के स्वभाव के चलते उसमें ये अधिकार मिहित होते हैं।

अधिकारों के इस सिद्धांत के प्रतिपादकों में डॉल्ब, लॉक, कूसो जैसे समझौतावादी विचारकों के भलावा मर्दन वाल्टेयर, थामस पेन आदि का नाम प्रमुख है।

इस सिद्धांत ने अमेरिका तथा फ्रांसीसी क्रांतियों के प्रेरणा के स्त्रोत के रूप में कार्य किया है। फिर भी इस सिद्धांत के ऐतिहासिक महत्व के बावजूद इसमें अनेक दोष हैं। सबसे पहले प्राकृतिक अधिकार के अर्थ का स्पष्ट कूना मुश्किल है। इसके, समझौतावादी राज्य को अधिकारों का स्त्रोत नहीं मानते जबकि यह सामान्य रूप से स्वीकार किया जाता है कि व्यक्तियों द्वारा अधिकारों के उपयोग के लिए राज्य की मान्यता एवं संरक्षण आवश्यक है।

## 2. कानूनी अधिकारों का सिद्धांत (Legal theory of rights):—

बेंथम, होल्डेन्स (Bentham, Austin, Holland) आदि विद्वानों ने कानूनी अधिकारों के सिद्धांत का समर्थन किया है। बेंथम जो कानूनी अधिकारों के सिद्धांत का सबसे बड़ा समर्थक है, ने प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धांत को अवास्तविक एवं निराधार घोषित किया है। इस सिद्धांत के समर्थकों का कहना है कि व्यक्ति के अधिकारों का अस्तित्व राज्य पर निर्भर करता है तथा जब तक किसी अधिकार को राज्य द्वारा मान्यता न मिले, वह वास्तविक अर्थ में अधिकार नहीं हो सकता। कोई भी अधिकार निरपेक्ष नहीं हो सकता बल्कि राज्य की इच्छा अथवा कानून के परिणाम होते हैं। अतः राज्य की स्थापना के पूर्व अधिकारों का अस्तित्व नहीं था।

इस सिद्धांत के विरुद्ध मुख्य तर्क यह दिया जाता है कि अधिकारों का अस्तित्व कानूनों पर आधारित नहीं माना जा सकता। बहुत से ऐसे अधिकार होते हैं जो पहले से अस्तित्व में रहते हैं और उन्हें बाद में चलकर राज्य कानूनी मान्यता प्रदान करता है।



### 3. आधिकारों के ऐतिहासिक सिद्धांत (Historical theory of rights):—

इस सिद्धांत के समर्थकों में Edmund Burke का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह सिद्धांत यह मानता है कि आधिकार एक लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया के परिणाम होते हैं। वर्षों से चले आ रहे रीति-रिवाज आधिकारों का रूप चारण कर लेते हैं यह उल्लेखनीय है कि ऐतिहासिक सिद्धांत के समर्थक England के संवैधानिक इतिहास की प्रशंसा करते हैं क्योंकि उनके अनुसार यह इतिहास एक लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया से होकर आधिकारों के विकास की कसनी है।

आधिकारों के ऐतिहासिक सिद्धांत का आलोचनात्मक परीक्षण करते हुए यह कहा जा सकता है कि यद्यपि बहुत से आधिकार रीति-रिवाज के परिणाम स्वरूप अस्तित्व में आते हैं परन्तु सभी आधिकारों को रीति-रिवाजों का ही परिणाम कहना उचित नहीं है। बहुत सी ऐसी भी प्रथाएँ रही हैं जिन्हें कभी भी आधिकार का दर्जा प्राप्त नहीं हुआ इसके अलावा, आधिकारों के ऐतिहासिक सिद्धांत को यदि स्वीकार कर लिया जाय तो वेला स्थिति में सामाजिक सुधार की संभावना खत्म हो जाएगी।

### 4. आधिकारों का सामाजिक कल्याण सिद्धांत (Theory of social welfare)

महत्त्व-1):—

इस सिद्धांत का समर्थन 19वीं सदी के उपयोगितावादी विचारधारा के मानने वाले विद्वानों ने किया। इस सिद्धांत के समकालीन समर्थकों Roscoe D. Pound के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। Bentham जैसे उपयोगितावादियों के अनुसार Greatest happiness of the greatest number की आधिकार की मान्यता की कसौती है। Charles ने भी यह मत व्यक्त किया है कि आधिकार अनिवार्य लोककल्याण से सम्बंधित होते हैं और व्यक्ति को केवल वे ही आधिकार मिलने चाहिए जो सामाजिक दृष्टि से उपयोगी हों। अतः कानून रीवाज तथा प्राकृतिक आधिकार सभी को समान कल्याण के सामने झुकेना चाहिए।

परन्तु लोक कल्याण की चारबां अपने आप में अनिश्चित एवं अस्पष्ट हैं। इसके अलावा, सामाजिक कल्याण एवं व्यक्तिगत कल्याण में संघर्ष भी हो सकता है और ऐसी दशा में



निश्चय ही सामाजिक कल्याण को महत्व दिया जायेगा। पण्डित  
सामाजिक कल्याण या भाव्यकर्म लोगों का अधिकतम सुख  
मिलने द्वारा परिभाषित किया जायेगा यह भी एक समस्या है।

#### 5. अधिकारों का आदर्शवादी सिद्धांत (Idealistic theory of rights):-

यह सिद्धांत विभिन्न रूप से अधिकारों को नैतिक अर्थों में देखता है और व्यक्ति के नैतिक विकास के लिए उन्हें आवश्यक मानता है। अधिकारों के बिना व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की ऊंचाई तक नहीं पहुँच सकता और इससे समाज का भी विकास होता है। पण्डित यह सिद्धांत यह बताने में असमर्थ है कि वे कौनसे आवश्यक दबाएँ हैं जो व्यक्ति के विकास में योगदान करती हैं। इससे यह सिद्धांत लोक कल्याण की तुलना में व्यक्ति को अधिक महत्व ~~प्रदान~~ प्रदान करता है। पण्डित कुछ आदर्शवादी लेखक इस सीमा तक सुझाव देते हैं कि व्यक्ति राज्य की भांजा का पालन बिना किसी नानुश्रुति के करे और राज्य की आलोचना करने का अधिकार नागरिकों को नहीं देते हैं। इससे व्यक्ति के नैतिक विकास पर निरुचित रूप से बाँधा पड़ेगा।

#### 6. अधिकारों के मार्क्सवादी सिद्धांत :— (Marxism theory of rights):-

ने अधिकारों के सम्बन्ध में किसी सिद्धांत का प्रतिपादन नहीं किया है। उसने तो पूँजीवादी समाज में व्यक्तियों को दिये गये अधिकारों के स्वरूप के आलोचना की। इतना ही नहीं बाद के मार्क्सवादी दार्शनिकों ने भी इस ओर ध्यान नहीं दिया। लेकिन अधिकार के संबंध में मार्क्सवादी दृष्टिकोण को समझने के लिए हमें सामान्यवादी देशों के संविधानों जिनमें USSR चीन पोलैंड हंगरी रोमानिया और यוגोस्लाविया